बौद्ध मूर्तिकला

1. भारतीय वास्तुकला
- सिंधु सभ्यता
- बौद्ध वास्तुकला
- मंदिर वास्तुकला
- हिंद-इस्लामिक वास्तुकला
- आधुनिक वास्तुकला

2. भारतीय मूर्तिकला
- सिंधु सभ्यता
- बौद्ध मूर्तिकला
- गुप्त मूर्तिकला
- मूर्तिकला के मध्यकालीन पीठ
- आधुनिक भारतीय मूर्तिकला

3. भारतीय चित्रकला
- भित्ति-चित्रकला
- लघु चित्रकारी
- आधुनिक चित्रकला

अशोक स्तंभ शिला, सिंह शीर्ष, सारनाथ, उत्तरप्रदेश

भारत में पाई गई प्राचीनतम ऐतिहासिक मूर्ति चौथी-तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व मौर्य काल की है । इसकी सुस्पष्ट व विशाल शैली की यथार्थता में अखमानी फारस से खुलकर विदेशी तत्व लिए गए थे । महान बौद्ध सम्राट ने बलुआ पत्थर के एकाश्मिक स्तंभ खड़े करवाए । 30 से 40 फीट ऊँचे इन स्तंभों के शीर्ष वृषभ, सिंह व हाथी बने हुए थे तथा स्तंभ पर सदाचार, मानवता व पवित्रता के बौद्ध उपदेश अंकित किए गए थे । सम्राट अशोक चाहते थे कि उनकी प्रजा इन उपदेशों का अनुसरण करे । बिहार के लौरिया नंदनगढ़, सांची और सारनाथ में अशोक के प्रसिद्ध स्तंभ पाए गए हैं ।

इनमें सबसे असाधारण है सारनाथ में पाया गया, पॉलिश किया गया एकाश्मिक शीर्ष जो कि अब भारत सरकार का चिह्न है । इसमें चार दहाड़ते हुए सिंहों को चार प्रमुख दिशाओं की ओर मुँह किए हुए और एक दूसरे की ओर पीठ किए हुए दिखाया गया है । गोलाकार शीर्षफलक को चार धर्मचक्रों से अलंकृत किया गया है जिनके बीच में बारी-बारी से एक हाथी, एक वृषभ, एक घोड़े और एक सिंह को अत्यंत कुशलता से उत्कीर्ण किया गया है । शीर्षफलक का आधार घंटी के आकार का है जिसमें धर्मचक्र के साथ एक कमल है जो संभवत: मानव बल के आगे सच्चाई की जीत का प्रतीक है । आकृतियों की बेहतरीन बनावट यथार्थवादी और विशिष्ट होने के अलावा इनमें शक्ति और गरिमा भी निहित है जो कि मौर्य कला के अभिजात और अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप पर प्रकाश डालती है ।

रामपुरवा, बिहार से वृक्षभ शीर्ष

कला का अध्ययन करने वाले लब्धप्रतिष्ठ छात्र के लिए शीर्ष पर ध्यानपूर्वक दृष्टि डालना अत्यंत लाभप्रद होगा । इसके ऊपर बने चार सिंह अत्यंत आकारगत व रूढ़ शैली के अनुसार अंकित किए गए हैं । यह सिंह की अयाल देखकर स्पष्ट हो जाता है जिसे लपटों के आकार के बालों के गुच्छे के गुच्छे के रूप में दर्शाया गया है जो कि स्वाभाविक न होकर रूढ़ शैली के अनुसार है । सिंहों का ऊपरी होंठ तीन उत्कीर्ण रेखाओं के माध्यम से दर्शाया गया है जो कि पुन: आकारिक व रूढ़ शैली के अनुसार हैं । हमें याद रखना चाहिए कि वह अशोक ही था जिसने मूर्तियों तथा स्मारकों के लिए पत्थरों का विस्तृत प्रयोग आरंभ किया जबकि विगत परंपरा पत्थर तथा मिट्टी से काम करने की थी ।

शीर्षफलक पर बने पशुओं को समीप से देखने पर पता चलता है कि ये स्थैतिक या दुर्नम्य नहीं हैं । प्रकृति में बड़े ध्यान से इन्हें देखकर इन्हें अत्यंत प्राकृतिक व जीवंत रूप से दर्शाया गया है ।

रामपुरवा, बिहार से प्राप्त वृषभ के आकार में शीर्ष भी तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व का है और फारसी तथा भारतीय तत्वों का मिश्रण होने के कारण इकसा अध्ययन रोचक है । कमल शीर्ष पूर्ण रूप से आकारगत है । शीर्षफलक पर किए गए सुंदर अलंकरण में पुष्पिका (rosette) ताड़पत्राकार (palmetto) तथा कंट (acanthus) सरीखे आभूषण शामिल हैं जिनमें से कोई भी भारतीय नहीं है ।

लेकिन वृषभ शीर्ष का सर्वोच्च तत्व स्वयं वृषभ है जो कि भारतीय शिल्प कला का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है । इसमें ककुद् वाले वृषभ को बेहतरीन आकार दिया गया है । इसके मुलायम मांस, सुडौल पैर, संवेदनशील नथुने और चौकन्ने कानों को खूबसूरती से गढ़ा गया है ।

चौरी-बियरर (यक्षी), लाइम स्टोन, दीदारगंज, बिहार

उड़ीसा में धौली नामक स्थान में अत्यंत कौशल से एक हाथी को इस प्रकार दर्शाया गया है मानो वह चट्टान से उभर रहा हो । इस चट्टान को इस प्रकार काटा गया है कि यह हाथी के सिर और सूँड़ सहित शरीर के अग्रभाग के समान दिखती है । दुर्भाग्यवश सही संरक्षण न होने के कारण इसकी दुर्दशा हो गई है । लेकिन फिर भी किसी चट्टान या विशाल पत्थर से इतने विशालकाय पशु की आकृति को गढ़ने की दिशा में पहला प्रयास होने के कारण यह रोचक है । किसी पशु का ऐसा चित्रण देश की देशी परंपरा के अनुसार है ।

मानव प्रतिमा बनाने की मौर्य शिल्पकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं जनन और समृद्ध के देवी-देवता, यक्ष और यक्षी की विशालकाय प्रतिमाएं । पटना संग्रहालय की यक्षी तीसरी-दूसरी शताब्दी ईसा-पूर्व का प्रभावशाली उदाहरण है जिसे किसी प्रतिभावान मूर्तिकार ने गढ़ा होगा । अत्यंत भारी अलंकरण और भारी अंतरीय पहने हुए यह आकृति बनावट में विशाल और निधड़क है । इस आकृति के भरे हुए वक्षस्थल, पतली कमर और चौड़े कूल्हों के माध्यम से नारी सौंदर्य के भारतीय आदर्श को भव्य तरीके से दर्शाया गया है । भारतीय मूर्तिकार अपनी सुंदर रचनाओं को स्पष्ट अवलोकन के बजाय काव्यमय या चाक्षुष रूपकों में गढ़ना पसंद करता था । इस प्रतिमा की सुंदरता को इस काल का विशिष्ट चमकदार पॉलिश और भी सुंदर बनाता है ।

तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में मौर्य कला का एक अन्य प्रभावशाली उदाहरण है लोहानीपुर से प्राप्त एक मनोहर पुरूष धड़ प्रतिमा । आकृति का वास्तविक गढ़न इसे अदभुत ओजस्विता प्रदान करता है । यह आकृति संभवत: किसी जैन तीर्थंकर या दिगंबर संप्रदाय के किसी उद्धारक की रही होगी ।

बोधि वृक्ष की पूजा, भरहुत, मध्यप्रदेश

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात लगभग 185 ईसा पूर्व में शुंगों का शासनकाल आरंभ हुआ । उन्होंने उत्तरी भारत के मध्य व पूर्वी हिस्सों पर शासन किया । सादगी से भरपूर उनकी सहज शैली जो लोगों को आकर्षित करती थी, का उत्कृष्ट प्रतिनिधित्व ग्वालियर व मथुरा से प्राप्त यक्ष और यक्षियों की एकाश्मिक मूर्तियां तथा कोलकता के इंडियन म्यूजियम में रखे गए भरहुत के बौद्ध स्तूप के खूबसूरती से उत्कीर्ण प्रवेशद्वार व बाडों के अवशेष करते हैं । भरहुत में मूर्तियों के माध्यम से बुद्ध के पूर्व जन्म के जातकों का वर्णन, सांची की आलंकारिक कला तथा मथुरा का जैन स्तूप, सभी समान परंपरा का हिस्सा हैं । सभी में काष्ठ निर्माण की छाप है और मूर्तियों की शैली में लकड़ी या हाथी दांत पर नक्काशी से समानता है जिसमें मुख्य रूप से समतल सतह पर काम या उसका विस्तार किया जाता था जो कि अग्रभाग के सिद्धांत पर निर्भर था । यह 'संदर्श' प्रस्तुति से काफी भिन्न था । चाहे वह चरण कमल द्वारा बुद्ध का चित्रण हो, खाली सिंहासन हो अथवा चामर जोड़ा या त्रिरत्न चिह्न या माया देवी द्वारा जन्म देने के बाद दो हाथियों द्वारा कलश से जल उड़ेलते हुए नवजात शिशु का अभिषेक, कलाकार ने सभी का चित्रण चिह्नों द्वारा किया है ।

जब कलाकार प्रकृति देवी यक्षी या जनन का प्रतीक दिव्य सुंदरी, सुरा-सुंदरी की परिकल्पना करता है तो उसकी भौंहें धनुष की चाप, आंखें वक्र मछली, होंठ कमल की पंखुड़ी, बांहें रमणीय लता और पैर हाथी की सूँड़ या केले के वृक्ष की भांति शुण्डाकार बनाता है । कलाकार की निष्ठा जिसे वह स्वप्न में वास्तविकता अथवा काव्यमय रूपक मानता है, के प्रति हैं । इस निरूपण, आदर्श प्रतिबिंब को वह पूरी सच्चाई के साथ जनन के विभिन्न देवी-देवताओं व भरहुत के रेलिंग स्तंभों पर दर्शाए गए अन्य दृश्यों के बीच प्रस्तुत करने का प्रयास करता है । चुलकोक देवता की आकृति शुंग कला का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है जो इसकी देशज विशेषता और लोक स्वरूप का प्रतिनिधित्व करता है । हाथी पर मनोहर तरीके से खड़ी उसकी बांहें और एक पैर पुष्पण वृक्ष का इस प्रकार आलिंगन कर रहे हैं मानो वह कोई वृक्ष देवी हो । भारी अलंकरण, अंतरीय व शिरोवस्त्र पहनने का तरीका, सभी उस काल की स्त्रियों के भूषाचार की ओर संकेत करते हैं । आकृति में एक लावण्य है जो भावी कुषाण आकृतियों में प्राचुर्य में दिखता है । इसकी दाहिनी ओर नामपत्र पर यक्षी के नाम उत्कीर्ण हैं और यह भी लिखा है कि यह स्तंभ आर्य पंथक की भेंट थी ।

अनेक रोचक जातक कथाएं हैं और भरहुत इन पौराणिक कथाओं का खज़ाना है जिन्हें यहां दर्शाया गया है । इस गोलाकार फलक में अनंत पिंडिक द्वारा जेतवन उद्यान की ज़मीन को इस व्यापारी राजकुमार द्वारा भेंट दिए जाने से पहले स्वर्ण मुद्राओं से ढकने की कथा दर्शाई गई है ।

दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व की शुंग कला का एक अन्य बेहतरीन उदाहरण है मध्य भारत मे पीतलखोरा गुफ़ाओं से प्राप्त बौने के आकार की यक्ष की हँसमुख प्रतिमा जिसके सिर पर समृद्धि एक एक कटोरा है । उसके चेहरे की उन्मुक्त मुस्कान और गोलाकार पेट उसके सभी प्रकार से संतुष्ट होने की ओर संकेत करते हैं । उसके हार में गुंथे दो ताबीज़ उसके भक्तों को बुरी आत्माओं को बचाते हैं । उसके दाहिने हाथ के पीछे कृष्णदास नामक मूर्तिकार का नाम उत्कीर्ण है जो पेशे से सुनार था । आमतौर पर भारतीय कला अनाम है क्योंकि इसमें मूर्तिकार या कलाकार स्वयं का महिमामंडन नहीं करना चाहता था । वह सदा अपना सर्वोत्कृष्ट कार्य भगवान या अपने संरक्षक, राजा, जो कि उसके लिए भगवान के समान था, को विनम्र भेंट के रूप में अर्पित करता ।

हालांकि यह विचित्र लग सकता है, लेकिन ईसवी सन् के पूर्व बौद्ध कला में बुद्ध को कभी भी मानवाकार में नहीं दर्शाया गया क्योंकि उनकी आध्यात्मिकता इसके लिए अत्यंत निराकार समझी जाती थी । बौद्ध धर्म को मानने वाले मुक्ति पाने के लिए हीनयान मार्ग का अनुसरण करते थे । प्रारंभिक भारतीय कला में बुद्ध का अस्तित्व बोधि वृक्ष जिसके नीचे उन्हें मोक्ष प्राप्त हुआ, न्याय चक्र, उनके पदचिन्ह, शाही छत्र, स्तूप तथा खाली सिंहासन, इत्यादि, प्रतीकों द्वारा दर्शाया जाता है ।

दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के भरहुत के स्तूप के वेदिका स्तंभ के अवशेष से मिले एक गोलाकार फलक में चार आकृतियों को बोधि वृक्ष को पूजते दिखाया गया है । बोध गया में बोधि वृक्ष के नीचे बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई थी । यहां पर वृक्ष, बुद्ध की मौजूदगी का प्रतीक है ।

भरहुत के स्तूप के प्रवेशद्वार के प्रस्तरपाद के अवशेष में हम भारतीय कलाकार के पशुओं तथा पेड़-पौधों के प्रति अथाह प्रेम, समझ और स्नेह की झलक पा सकते हैं जिसका उसने विस्तार से अध्ययन किया । इस प्रस्तरपाद के दोनों ओर मनुष्य और हाथियों को मध्य में बुद्ध के प्रतीक, बोधि वृक्ष, को श्रद्धांजलि देते दर्शाया गया है ।

किशवाकुओं ने सातवाहनों की महान कला परंपराओं को आगे बढ़ाया । उन्होंने नागार्जुन कोंडा में सुंदर नक्काशी वाले स्तूपों का निर्माण कराया ।

दक्षिण भारत के शक्तिशाली सातवाहन शासक महान निर्माता थे और दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से दूसरी शताब्दी ईसवी सन् के बीच उन्होंने अपने साम्राज्य में भारी अलंकरण वाले अनेक भव्य स्मारकों का निर्माण करवाया । भारत के पश्चिमी समुद्र तट पर उन्होंने गुहा मंदिरों, मठों तथा अनेक बौद्ध स्तूपों का निर्माण करवाया । उनके शासनकाल के दौरान सांची स्तूप पर की गई प्रचुर नक्काशी सातवाहन मूर्तिकारों के उच्च कौशल और तकनीकी निपुणता को दर्शाती है । स्तूप की उपासना महान दिवंगत आत्माओं का सम्मान करने का एक प्राचीन तरीका था । स्तूपों में न केवल बुद्ध और बौद्ध संतों के अवशेषों को प्रतिष्ठापित किया जाता था बल्कि इनका निर्माण धार्मिक महत्व के अवसरों का स्मरण करने के लिए भी किया जाता था । तीसरी और पहली शताब्दी ईसा पूर्व में निर्मित प्रारंभिक बौद्ध स्तूप का एक उत्कृष्ट उदाहरण मध्य भारत में सांची में स्थित है । चबूतरे पर बना यह एक ठोस संरचनात्मक गुंबद है और इसके ऊपर वेदिका वाला मंडल है जिससे शिखर पर बने छत्र का स्तंभ उभरता है । मूल रूप से स्तूप अंत्येष्टि के लिए बनाया गया मिट्टी का एक टीला था जिसके अंदर बुद्ध अथवा उनके शिष्यों के केश, हड्डियों के टुकड़े इत्यादि पवित्र अस्थि अवशेष प्रतिष्ठापित थे । सांची के वर्तमान स्तूप का निर्माण अशोक के शासन काल के दौरान हुआ था । लेकिन पहली शताब्दी ईसा पूर्व में इसका विस्तार कर इसमें प्रदक्षिणा के लिए अहाता तथा बाहरी अहाता जोड़ा गया । पथ के इर्द-गिर्द जंगल बने हैं जिनमें चार दिशाओं की ओर चार प्रवेशद्वार हैं । प्रस्तरपाद के दोनों फलकों तथा प्रवेशद्वारों के सभी स्तंभों पर किया गया बौद्ध उत्कीर्णन अपने भीड़ भरे दृश्यों, परिदृश्य और पत्थर पर सजीव प्रभाव की दृष्टि से असाधारण हैं ।

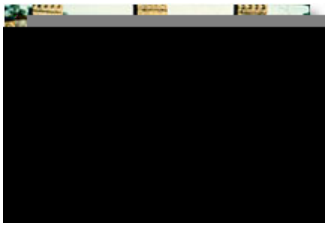

सांची स्तूप सं.1 तोरण का साक्ष्य, बोधि वृक्ष की पूजा करते हुए पशु, मध्यप्रदेश

सांची स्तूप के पूर्वी प्रवेशद्वार के एक हिस्से में बने एक आले में एक दृश्य में एक वृक्षिका या काष्ठ परी को दर्शाया गया है । यहां हम देख सकते हैं कि मूर्तिकार ने काफी प्रगति की है क्योंकि तीसरी-दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व में मूर्तिकार ने, हालांकि दुर्नम्य , लेकिन मानवाकृति का अग्रभाग बनाने का प्रयास किया है । मूर्तिकार आकृति को वृक्ष देवी के रूप में पेड़ की डालों से लटकते हुए दर्शाने में सफल रहा है । वृक्ष देवी की आकृति की नग्नता यह दर्शाती है कि वह प्रजननशक्ति की देवी है । त्रिभंग मुद्रा विकसित कर कलाकार ने आकृति को त्रिविम प्रभाव दिया है, यानि लंबाई चौड़ाई और गहराई, ताकि स्त्री आकृति की रूपरेखा और सौंदर्य उभर कर आए ।

सांची स्तूप सं.1 यक्षी, मध्यप्रदेश

गोली की वेस्संतर जातक पहली शताब्दी ईसवी की है । पूर्वजन्म में बुद्ध राजकुमार वेस्संतर थे जो अपना सर्वस्व दान करने में कभी नहीं थकते थे । एक हाथी, जो उनके राज्य की समृद्धि सुनिश्चित करता था और जिसे वहां की सबसे बहुमूल्य वस्तु माना जाता था, को राजकुमार ने अकाल की मार झेल रहे कलिंग के लोगों को भेंट में दिया ताकि वे भी अपनी भूमि को समृद्ध बना सकें । इस बात से नाराज़ उसके अपने राज्य के लोगों ने उसके पिता, राजा, से वेस्संतर और उसकी पत्नी तथा बच्चों को वनवास भेजने की मांग की । इस कला में राजकुमार की कठिनाइयों का मार्मिक चित्रण है लेकिन कथा का सुखद अंत है ।

लगभग पहली शताब्दी ईसवी में कर्ले से प्राप्त नक्काशी ज्यादा परिष्कृत है । इनमें दंपत्ति और मिथुन की आकृतियां तथा स्तंभों के शीर्ष पर भव्य हाथी की सवारी करते जोड़ों की आकृतियां जो प्रभावशाली स्तंभावली बनाते हैं, उल्लेखनीय हैं । ये आकृतियां आदमकद से भी विशाल हैं और इनकी बनावट शक्तिशाली और हृष्ट-पुष्ट आकार वाली है ।

दूसरी शताब्दी ईसवी में अमरावती से प्राप्त एक प्रसिद्ध उत्कीर्णन में चार स्त्रियों को बुद्ध के चरणों को पूजते हुए दिखाया गया है । आकृतियों के झुकाव की सुंदरता, गहन भक्ति का वातावरण तथा स्त्रियोचित लज्जा व नम्रता इसे एक उत्कृष्ट कलाकृति बनाते हैं ।

अमरावती से प्राप्त दूसरी शताब्दी ईसवी सन् के एक गोलाकार फलक में बुद्ध के दुष्ट चचेरे भाई, देवदत्त, द्वारा उनपर छोड़े गए पागल हाथी नलगिरी को शांत करने का दृश्य उत्कीर्ण है । बुद्ध पर मदमस्त हाथी को छोड़े जाने से पैदा हुई हलचल व भय बेहतरीन तरीके से दर्शाया गया है । इसके बाद क्रुद्ध हाथी को बुद्ध के चरणों पर शांत बैठे दिखाया गया है ।

नीलगिरि के पालतू हाथी, अमरावती राज्य संग्रहालय, चेन्नई, तमिलनाडु

दूसरी शताब्दी ईसवी में अमरावती की परिष्कृत शैली का एक अन्य उत्कृष्ट उदाहरण सुंदर अर्गला जंगल में दिखने को मिलता है । इसमें उत्कीर्ण दृश्य में राजकुमार राहुल को अपने पिता, बुद्ध के सामने प्रस्तुत होते दिखाया गया है जब वे अपने भूतपूर्व महल में अपने परिवार से मिलने पहुँचे । यहां बुद्ध की मौजूदगी को रिक्त सिंहासन, उनके पदचिह्नित, धर्म चक्र तथा त्रिरत्न के माध्यम से दर्शाया गया है । उनके दाहिनी और एक हाथी घोड़ा ओर सेवक खड़े हैं, सिंहासन के पीछे की ओर वस्त्र पहने उनके अनुयायी खड़े हैं जबकि बायीं ओर महल के निवासी । कुछ दूरी पर, पर्दे के पीछे मुँह छुपाते और हाथ बढ़ाकर नमन करते युवा राजकुमार का संकोच, घुटनों के बल बुद्ध की पूजा करती आकृतियों की कठिन भंगिमाओं का सूक्ष्म चित्रण, त्रिविम में इस भीड़ भरी रचना का प्रस्तुतिकरण, सभी मूर्तिकार के कौशल की ओर संकेत करते हैं जिसने इस उत्कृष्ट रचना को खूबसूरत चित्रमय प्रभाव के साथ तैयार किया ।

आयक या कारनिस शहतीर, जिसमें अनेक विषय दर्शाए गए हैं, नागार्जुनकोंडा की कला का विशिष्ट उदाहरण है । अमरावती में देखी गई विशेषताएं का यहां बाहुल्य है । आयतों में विभाजित शहतीर पर जातक कथाएं दर्शाई गई हैं । इसके बीच के अंतरण स्तंभों के लघु उपखंड़ों में प्रेमी युगल दर्शाए गए हैं । यहां पर बहुत कुछ दर्शाया गया है ; महल में होने वाला युद्ध और विभिन्न जोशपूर्ण प्रेममय मुद्राओं में पुरूष व नारी आकृतियां । विगत शताब्दियों में कलाकार मानव शरीर पर उपार्जित प्रवीणता का यहां प्रदर्शन करता है । ये आकृतियां जीवंत और गतिशील हैं और इन्हें वास्तविक जीवन का अवलोकन कर पूर्ण कौशल से तैयार किया गया है ।

326 ईसा पूर्व में सिंकदर के भारत पर हमले के बाद इसके उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों पर भारतीय-यूनानी भारतीय शक व कुशाण शासकों ने शासन किया और उनके प्रश्र में मूर्तिकला की एक विशिष्ट शैली विकसित हुई जो यूनानी-रोमन, बौद्ध या गांधार कला के नाम से लोकप्रिय है । यह यूनानी, पश्चिम एशियाई और स्थानीय तत्वों के सम्मिलन की उपज थी । भारतीय आवश्यकताओं के अनुसार यूनानी और रोमन तकनीकों में परिवर्तन कर उन्हें गांधार मूर्तिकला में प्रयुक्त किया गया । यह शैली वास्तव में पश्चिमी वेशभूषा में भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है । विषय-वस्तु मुख्यत: बौद्ध है । इस शैली का विस्तार भारत में तक्षशिला से लेकर पाकिस्तान में स्वात घाटी तथा उत्तर की ओर अफ़गानिस्तान तक था ।

ईसवी सन् की पहली शताब्दी के क्रांतिकारी परिवर्तन का न केवल भारत कला, बल्कि एशिया के बौद्ध देशों के कलात्मक विकास पर भी दूरगामी प्रभाव पड़ा । बुद्ध, जिन्हें अब तक केवल चिह्न के रूप में दिर्शाया जाता था, को मानवाकार दिया गया । उनके आकार को महापुरूषलक्षण से संबंधित 32 शारीरिक चिह्न दिए गए जैसे उभरा हुआ कपाल, गांठ लगे केश, भौंहों के बीच बिंदी तथा लंबे कान । यह परिवर्तन हिंदू दर्शन की भक्ति शाखा जिसमें व्यक्तिगत देवताओं को पूजा जाता था, के प्रभाव के कारण बौद्ध धर्म में जिस नए दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ था, उसके फलस्वरूप हुआ । इसके कारण बौद्ध धर्म के प्रति आम जनता के धार्मिक नज़रिए पर गहरा प्रभाव पड़ा होगा । अब प्रतिमा मूर्तिकला तथा उपासना का मुख्य तत्व बन गई । संभवत: गांधार तथा मथुरा में बुद्ध की प्रतिमा का आविर्भाव समानांतर घटना थी । प्रत्येक उदाहरण में स्थानीय परंपरा में काम करते हुए स्थानीय शिल्पकार ने इसे तैयार किया । मथुरा में इसका आविर्भाव स्पष्ट रूप से यक्ष परंपरा से हुआ । कुछ बाह्य स्वरूपों में गांधार प्रतिमा अपोलो सदृश और वस्त्र-विन्यास में विशिष्टत: यूनानी-रोमन प्रतीत हो सकती है, लेकिन वहां भी अधिकांश मूर्तियां बुद्ध को ठेठ योगिक मुद्रा में बैठे हुए दर्शाती हैं, एक ऐसी विशेषता जो कि यूनानी परंपरा में पूर्णत: अपरिचित थी ।

बुद्ध का शीर्ष, गंधारकालीन, दूसरी शताब्दी ईसवी सन्, उत्तरप्रदेश

बुद्ध का महापरिनिर्वाण दर्शाता फलक दूसरी शताब्दी ईसवी सन् की गांधार कला का उत्कृष्ट उदाहरण है । परमानंद की तलाश में राजकुमार सिद्धार्थ को अपने प्रिय घोड़े, कंथक पर सवार होकर जाते दर्शाया गया है । घोड़े के खुरों को दो यक्षों ने ऊपर उठा रखा है ताकि उनका परिवार आवाज़ सुनकर जाग न जाए । उनके साईस छांडाल ने उनके सिर के ऊपर शाही छत्र तान रखा है । दुष्ट मार, कुछ सैनिकों व नगरदेवी सहित राजकुमार से अपना पवित्र उद्देश्य त्यागने का आग्रह कर रहा है । गौतम के जीवन के इस वर्तनबिंदु को प्रभावकारी तरीके से दर्शाया गया है ।

तीसरी शताब्दीं ईसवी सन् की गांधार कला का एक अन्यठ विशिष्टा उदाहरण है खड़े हुए बोधिसत्व की आकृति । उनका दाहिना हाथ अभय मुद्रा में है । उनके सिर पर जड़ाऊ पगड़ी, शरीर पर ताबीज़ों की माला और पैर में बंधी हुई चप्पलें हैं । पीठिका पर दो कोरिंथियन स्तंभ हैं । मूँछों वाली बलिष्ठ आकृति, भारी वस्त्री-विन्यांस और बंधी हुई चप्पलें, सभी यूनानी-रोमन प्रभाव की ओर संकेत करते हैं ।

पहली से तीसरी शताब्दी ईसवी के बीच मध्य एशिया से आने वाले कुषाणों का उत्तर के विशाल हिस्सों पर आधिपत्य था । उनके शासनकाल में दिल्ली से केवल 80 मील दूर मथुरा गहन कलात्मक गतिविधियों का केंद्र था । यहां तक कि मथुरा के कारखाने शिल्पों की बाहरी मांग को भी पूरा कर रहे थे । अब पारंपरिक देवी-देवता तथा बौद्ध व जैन देवता, जो भारतीय कला के विकास की विशेषता थे, को प्रयोग के तौर पर तैयार किया जाने लगा । इस दौरान मथुरा के विशिष्ट लाल तथा लाल चित्तीदार बलुआ पत्थर में कुषाण सम्राटों तथा अनेक कुलीन पुरूष व स्त्रियों के भव्य चित्र तैयार किए गए ।

कुषाण सम्राटों के प्रश्रय में बौद्ध धर्म खूब फला-फूला और प्रारंभिक यक्ष सरीखी मूर्तियों जैसी बुद्ध और बोधिसत्व की अनेक प्रतिमाएं तैयार की गईं । यहां हम बुद्ध और बोधिसत्व के बीच अंतर बताते हैं । बुद्ध वो हैं जिन्होंने परम ज्ञान की प्राप्ति कर ली है जबकि बोधिसत्व उस ज्ञान के प्रत्याशी हैं । दूसरी शताब्दी ईसवी सन् में कुषाण शिल्पकार द्वारा बुद्ध की प्रतिमा के विकास का एक विशिष्ट उदाहरण है जिसमें उन्हें बोधि वृक्ष के तले सिंहासन पर पालथी मारकर बैठे दिखाया गया है । यहां उनका दाहिना हाथ अभय मुद्रा में जबकि बायां उनकी जांघ पर है । आंखें पूरी तरह से खुली हैं और कपाल के उभार को केवल एक लट को बाईं ओर लपेटकर दर्शाया गया है । हाथों और पैरों पर पवित्र चिह्न दर्शाए गए हैं । दोनों ओर चँवर पकड़े दो दिव्य आकृतियां खड़ी हैं । बुद्ध की यह आकृति तीन शताब्दियों बाद, गुप्त काल में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची ।

आसन मुद्रा में बुद्ध शिला, मथुरा, उत्तरप्रदेश

मथुरा के कुशल शिल्पकारों द्वारा गढ़ी गई मनोहर भंगिमाओं में शृंगार अथवा नृत्य या संगीत या उद्यान क्रीड़ा या किसी अन्य आमोद-प्रमोद में रत सुंदर नारियों की मूर्तियां शिल्पकारों के उच्च कला-कौशल की ऐंद्रिय आकर्षण से परिपूर्ण नारी सौदंर्य को श्रद्धांजलि है । किसी समय में मथुरा के एक स्तूप की शोभा बढ़ाने वाले अनेक खूबसूरती से उत्कीर्ण स्तंभों में ये तीन सबसे प्रसिद्ध हैं । दायीं ओर एक सुंदर कन्या को दायें हाथ में पिंजरा पकड़े दर्शाया गया है जिसमें से उसने एक तोते को मुक्त किया है जो उसके कंधे पर आकर बैठ गया है । तोता उसके प्रेमी द्वारा पिछली रात बोले गए मधुर व प्रेमपूर्ण शब्दों को दोहरा रहा है जिन्हें सुनकर वह

आनंदित हो रही है । मध्य में एक मोहक स्त्री रूचिर तरके से अपने बाएं पैर को आगे की ओर तिरछा कर खड़ी है और अपने भारी हार को अपने दायें हाथ से संभाल रही है । बाएं ओर की स्त्री के बाएं हाथ में अंगूर का गुच्छा है । उसने एक अंगूर तोड़ लिया है और उसे अपने बाएं हाथ में पकड़कर अपने दाये कंधे पर बैठे तोते को अपने प्रेमी द्वारा कहे गए शब्द कहने के लिए ललचा रही है । ऊपर के छज्जों में बाईं ओर से एक प्रेमी अपनी प्रेमिका को मदिरा का प्याला दे रहा है, दूसरा फूल दे रहा है जबकि दायीं ओर खड़ा प्रेमी हाथ में प्रसाधन की थाली पकड़े अपनी प्रेमिका की साज-शृंगार में सहायता कर रहा है । हालांकि ये आकृतियां नग्न, प्रतीत होती हैं लेकिन इनके शरीर का नीचे का हिस्सा पारदर्शक वस्त्रों में लिपटा है । यह सभी झुके हुए बौनों पर खड़े हैं जो संभवत: संसार में व्याप्त दुखों का प्रतीक हैं । इन सभी पर सुंदर नारी का सम्मोहन हावी है ।

प्रकाशनाधिकार © सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
15 ए, सैक्टर-7, द्वारका, नई दिल्ली-110075
संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार
दूरभाष नं0 (011) 25088638, 25309300, फैक्स 91-11-25088637, ई-मेल dir.ccrt@nic.in